[2018] 2 एस. सी. आर 521

महंत सत्यानंद उर्फ रामजी सिंह

बनाम

श्याम लाल चौहान और अन्य

(2010 का दीवानी अपील संख्या 6318)

08 फरवरी, 2018

[एन.वी. रमना और एस. अब्दुल नजीर, न्यायमूर्तिगण]

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908: आदेश 22, नियम 5 – लंबित अपील में विधिक प्रतिनिधि का प्रत्यारोपण – उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिद्वंद्वी दावेदारों द्वारा दायर प्रत्यारोपण आवेदनों को स्वीकार करते हुए दोनों दावेदारों को वाद विषय से संबंधित अपने-अपने तर्क प्रस्तुत करने का अधिकार देना, बिना यह निर्धारित किए कि मृतक का वास्तविक विधिक प्रतिनिधि कौन है – उपयुक्तता – अभिनिर्धारितः जब किसी लंबित वाद में न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि मृतक के विधिक उत्तराधिकारी के रूप में अभिलेख पर कौन आएगा, तो न्यायालय को, वाद के गुण-दोष से संबंधित मूल मुद्दों पर विचार करने से पूर्व, सर्वप्रथम यह निर्धारित करना चाहिए कि मृतक का विधिक प्रतिनिधि कौन है। ऐसा किए बिना न्यायालय प्रकरण के निस्तारण की कार्यवाही आगे नहीं बढ़ा सकता। साथ ही, न्यायालय सभी दावेदारों को पक्षकार नहीं बना सकता। विधिक प्रतिनिधि का निर्धारण करने का प्रश्न इस दृष्टि से भी स्थगित नहीं किया जा सकता कि इसे अपील के अंतिम निस्तारण के समय गुण-दोष के आधार पर तय किया जाएगा। विधि स्पष्ट रूप से यह उपबंध करती है कि यदि अपीलीय न्यायालय के समक्ष किसी उत्तराधिकारी के विधिक प्रतिनिधि के निर्धारण का प्रश्न उत्पन्न होता है, तो वह अधीनस्थ न्यायालय को निर्देश दे सकता है कि वह परीक्षण की प्रक्रिया के माध्यम से, यदि कोई साक्ष्य हो, उसका संकलन कर आवश्यक जांच करे और यह निष्कर्ष अभिलिखित करे कि विधिक प्रतिनिधि कौन है।

विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष पर विचार करने के पश्चात अपीलीय न्यायालय मृतक के विधिक प्रतिनिधि को अभिलेख पर लाने का निर्णय कर सकता है। प्रकरण को आदेश 22, नियम 5 के प्रावधानों के अनुसार इस प्रश्न का निर्धारण करने हेतु उच्च न्यायालय को पुनः प्रेषित किया गया।

अपीलों को स्वीकार करते हुए एवं मामले को उच्च न्यायालय के पास पुनः प्रेषित करते हुए, न्यायालय ने... मृतक के

अभिनिर्धारितः 1. लंबित अपील में विधिक प्रतिनिधि को अभिलेख पर लाने के प्रश्न का निस्तारण आदेश 22, नियम 5 के प्रावधानों के अनुसार किया जाना चाहिए। जब किसी लंबित वाद में न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि मृतक के विधिक उत्तराधिकारी के रूप में अभिलेख पर कौन आएगा, तो न्यायालय को वाद के गुण-दोष से संबंधित मूल मुद्दों पर विचार करने से पूर्व, सर्वप्रथम यह निर्धारित करना चाहिए कि मृतक का विधिक प्रतिनिधि कौन है। यह भी सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि जब द्वितीय अपील के चरण पर कोई पक्षकार मृत्यु को प्राप्त हो जाता है और मृतक के विधिक प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले प्रतिद्वंद्वी दावेदार उपस्थित होते हैं, जैसा कि वर्तमान मामले में है, तब न्यायालय पर यह दायित्व होता है कि वह सर्वप्रथम यह निर्धारित करे कि मृतक का विधिक प्रतिनिधि कौन है। ऐसा किए बिना न्यायालय वाद के निस्तारण की कार्यवाही आगे नहीं बढ़ा सकता। साथ ही, न्यायालय सभी दावेदारों को पक्षकार नहीं बना सकता। विधिक प्रतिनिधि के निर्धारण के प्रश्न को इस दृष्टि से भी स्थगित नहीं किया जा सकता कि उसे अपील के अंतिम निस्तारण के समय गुण-दोष के आधार पर तय किया जाएगा। [कंडिका 10] [526-एच; 527-ए-सी]

2. यह निर्विवाद है कि प्रक्रिया संबंधी विधियाँ न्याय को आगे बढ़ाने के लिए होती हैं। संहिता के अंतर्गत जो प्रक्रिया अनिवार्य प्रकृति की है, उसे न्यायालयों द्वारा न तो छोड़ा जा सकता है और न ही उपेक्षित किया जा सकता है। जबकि वर्तमान मामले में उच्च

न्यायालय का दृष्टिकोण दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 5 के अभिप्राय को क्षीण करता है।[कंडिका 11] [527-ई-एफ]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2010 की दीवानी अपील सं. 6318

1993 की दूसरी अपील संख्या 169 में पटना में उच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णय और आदेश से।

के साथ

2010 का सी.ए. सं. 6319

पक्षों के लिए उपस्थित:- नागेंद्र राय, आर. वेंकटरमानी, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुश्री प्रेरणा सिंह, रोहित के. सिंह, टी. महिपाल, अतिशी दीपांकर, संतोष कुमार, सुकुमार, जितेंद्र कुमार, प्रफुल्ल रंजन तिवारी, राजीव रंजन मिश्रा, अतिशी दीपांकर, टी. महिपाल, जी. उमापति, अर्धेन्डुमौली कुमार प्रसाद, सुश्री तरुणा अर्धेन्डुमौली प्रसाद, नमित सक्सेना, निर्निमेश दुबे, अधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय द्वारा दिया गया

एन.वी. रमना, न्यायमूर्ति 1.विशेष अनुमति द्वारा दायर ये अपीलें, पटना स्थित न्यायिक उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा द्वितीय अपील संख्या 169/1993 में दिनांक 24.02.2009 को पारित अंतरिम आदेश के विरुद्ध निर्देशित हैं। उक्त अपील में, अंतरिम आवेदन संख्या 7162/1999 एवं अंतरिम आवेदन संख्या 8089/1999, जो दो आवेदकों द्वारा दायर किए गए थे और जिनमें से प्रत्येक ने स्वयं को उच्च न्यायालय के समक्ष मृत अपीलकर्ता संख्या 1 का एकमात्र विधिक प्रतिनिधि होने का दावा किया था, पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय ने दोनों प्रतिद्वंद्वी दावेदारों के आवेदनों को स्वीकार कर लिया और उन्हें लंबित दीवानी वाद के विषय में अपने-अपने तर्क प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान कर दी।

2. इस वाद की उत्पत्ति एक वाद से हुई, जिसे वर्तमान उत्तरदाताओं द्वारा स्वामी शिव धर्मानंद एवं दो अन्य के विरुद्ध इस घोषणा के लिए दायर किया गया था कि वे अतिक्रमणकारी हैं तथा इसके परिणामस्वरूप स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान किए जाने की प्रार्थना की गई थी। वाद के खारिज हो जाने के उपरांत, वादी-उत्तरदाताओं ने भभुआ के सब-जज के समक्ष प्रथम अपील दायर की, जिसे स्वीकार कर लिया गया। इससे आहत प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील दायर की। उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील के लंबित रहने के दौरान, मूल प्रतिवादियों में से एक, अर्थात् स्वामी शिव धर्मानंद (उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता संख्या 1) का निधन हो गया। इसके पश्चात, वर्तमान अपीलकर्ताओं ने द्वितीय अपील में पृथक-पृथक अंतरिम आवेदन दायर कर स्वयं को मृतक के वास्तविक चेले एवं उत्तराधिकारी के रूप में अभिलेख पर लिए जाने का निवेदन किया। उच्च न्यायालय ने दिनांक 02.07.2008 के अपने आदेश द्वारा मामले को विचारण न्यायालय के समक्ष इस निर्देश के साथ पुनः प्रेषित किया कि वह दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 नियम 5 के अंतर्गत प्रतिवेदन प्रस्तुत करे। दिनांक 02.07.2008 को उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:-

> "मृत अपीलकर्ता के विधिक प्रतिनिधि के प्रश्न का निर्धारण करना आवश्यक है। दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 5 में उक्त प्रश्न के निर्धारण की प्रक्रिया का प्रावधान किया गया है। यह इस प्रकार है:-
>
> > **5. कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रश्न का निर्धारणः-**
> >
> > जहाँ यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि कोई व्यक्ति मृत वादी या मृत प्रतिवादी का कानूनी प्रतिनिधि है या नहीं, तो ऐसा प्रश्न न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाएगाः- बशर्ते कि जहां ऐसा प्रश्न किसी अपीलीय न्यायालय के समक्ष उत्पन्न होता है, वह न्यायालय, प्रश्न का निर्धारण करने से पहले, किसी अधीनस्थ न्यायालय को प्रश्न का परीक्षण करने और ऐसे विचारण में

दर्ज साक्ष्य, यदि कोई हो, तो उसके निष्कर्षों और कारणों के साथ अभिलेखों को वापस करने का निर्देश दे सकता है, और अपीलीय न्यायालय प्रश्न का निर्धारण करते समय उसी पर विचार कर सकता है।

इस प्रकार, उपरोक्त प्रावधान को ध्यान में रखते हुए, मृतक अपीलकर्ता संख्या 1 शिव धर्म नंद उर्फ देव शंकर तिवारी के कानूनी प्रतिनिधि के निर्धारण का मामला अधीनस्थ न्यायालय यानी उप न्यायाधीश-I, भभुआ को भेजा जाता है जो इस आदेश की प्राप्ति के दो महीने के भीतर अपने निष्कर्षों और साक्ष्य, यदि कोई हो, के साथ इस अदालत को वापस करेगा।.

3. अधीनस्थ न्यायालय ने तथ्यात्मक और कानूनी दोनों पहलुओं पर मामले में शामिल प्रासंगिक मुद्दों पर विचार करने के बाद 4 दिसंबर, 2008 को एक प्रतिवेदन दी है कि स्वामी सत्यानंद महाराज (2010 की दीवानी अपील संख्या 6318 में अपीलकर्ता) मृतक के कानूनी प्रतिनिधि हैं और प्रतिवेदन उच्च न्यायालय को भेजी है। इससे व्यथित होकर, आवेदक (2010 की दीवानी अपील संख्या 6319 में अपीलकर्ता) ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपनी आपत्तियाँ दायर की हैं और उसी के जवाब में, दूसरे आवेदक (2010 की दीवानी अपील संख्या 6318 में अपीलकर्ता) ने प्रति शपथपत्र दायर किया है। पक्षों को विस्तार से सुनने के बाद, उच्च न्यायालय ने दोनों आवेदकों के अंतरिम आवेदनों को अनुमति देते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया है और दोनों को लंबित दूसरी अपील कार्यवाही में भाग लेने की अनुमति दी है। आक्षेपित आदेश के कंडिका 19 को यहाँ उल्लेख करना उचित है जो निम्नलिखित शब्दों में हैः

""उपरोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों में, यह न्यायालय यह उचित एवं आवश्यक समझता है कि तीनों अंतरिम आवेदनों, अर्थात् अंतरिम आवेदन संख्या 7162/1999, अंतरिम आवेदन संख्या 8089/1999 तथा अंतरिम

आवेदन संख्या 357/2005 का निस्तारण इस निर्देश के साथ किया जाए कि दोनों आवेदक, अर्थात् स्वामी त्रियोगानंद उर्फ राम नारायण प्रसाद (अंतरिम आवेदन संख्या 7162/1999 के आवेदक) तथा महंथ सत्यानंद उर्फ रामजी सिंह (अंतरिम आवेदन संख्या 8089/1999 के आवेदक) को मृत अपीलकर्ता संख्या 1, शिव धर्मानंद उर्फ देव शंकर तिवारी के स्थान पर प्रतिस्थापित किया जाए। दोनों को अपने-अपने अधिवक्ताओं के माध्यम से प्रतिनिधित्व करने तथा इस द्वितीय अपील की अंतिम सुनवाई के समय वाद के विषय में अपने-अपने तर्क प्रस्तुत करने का अधिकार होगा, किन्तु उन्हें ऐसा कोई बिंदु उठाने का अधिकार नहीं होगा जो मूल प्रतिवादी-अपीलकर्ता संख्या 1 के रुख, अभिवेदन एवं साक्ष्य के विपरीत हो।"

4. अब इन अपीलों में हमारे विचार के लिए जो प्रश्न आता है वह यह है कि क्या उच्च न्यायालय यह निर्धारित किए बिना कि दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 5 के तहत मृतक का वास्तविक कानूनी प्रतिनिधि कौन है, लंबित अपील में दोनों प्रतिद्वंद्वी दावेदारों के आवेदनों को अनुमति देने में सही था, जो उन्हें दूसरी अपील में अपनी-अपनी तर्क प्रस्तुत करने का अधिकार देता है।

5. अपीलकर्ताओं का मुख्य तर्क यह है कि उच्च न्यायालय ने गंभीर विधिक त्रुटि की है, क्योंकि उसने मृतक के वास्तविक विधिक प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले प्रतिद्वंद्वी दावेदारों द्वारा दायर दोनों प्रत्यारोपण आवेदनों को स्वीकार कर लिया, बिना विधि में निर्धारित प्रावधानों के अनुसार यह निर्धारित किए कि मृत अपीलकर्ता का विधिक प्रतिनिधि कौन है। उच्च न्यायालय का आदेश दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 5 के प्रावधानों के अनुरूप नहीं है और यह अन्यायपूर्ण है कि सर्वोपरि प्रश्न का निर्णय करने के स्थान पर उच्च न्यायालय ने केवल ऐसा आदेश पारित कर दिया, जिससे दोनों दावेदारों को वाद के विषय में अपने-अपने तर्क प्रस्तुत करने का अधिकार मिल गया। उच्च

न्यायालय का आदेश विकृत , न्याय के हित में नहीं तथा विधि के स्थापित सिद्धांतों के विपरीत है।

6. उत्तरदाताओं की ओर से अधिवक्ता ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के समर्थन में यह तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने अपील का प्रतिवाद करने का अवसर प्रदान करते हुए दोनों आवेदनों को सही रूप से स्वीकार किया है।

7. तत्पश्चात विचारणीय प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जब इस प्रकार के आवेदन न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं, तब न्यायालय को कौन-सी प्रक्रिया अपनानी चाहिए।

8. आदेश 22 नियम 5, दीवानी प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आवेदन दायर किए जाने पर अपनाई जाने वाली प्रक्रिया अब अनिर्णीत नहीं रह गई है, क्योंकि इस न्यायालय ने ***जलादी सुगुना (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से बनाम सत्य साई सेंट्रल ट्रस्ट एवं अन्य, (2008) 8 एससीसी 521*** में आदेश 22 नियम 5 की व्याख्या निम्नलिखित रूप में की है:

> " विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने हेतु आवेदन दायर करना, विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने के समान नहीं है। **जब विधिक प्रतिनिधि का आवेदन दायर किया जाता है, तो न्यायालय को उस पर विचार कर यह निर्णय करना चाहिए कि उसमें उल्लिखित व्यक्तियों को मृतक की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने हेतु अभिलेख पर लाया जाना चाहिए या नहीं।** जब तक न्यायालय द्वारा ऐसा निर्णय नहीं किया जाता, तब तक स्वयं को विधिक प्रतिनिधि बताने वाले व्यक्तियों को न तो मृतक की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार होता है और न ही वे वाद का अभियोजन या प्रतिरक्षण कर सकते हैं। **यदि यह विवाद हो कि विधिक प्रतिनिधि कौन है, तो उस विवाद का निर्णय किया जाना चाहिए। केवल**

तब, जब न्यायालय द्वारा विधिक प्रतिनिधि का निर्धारण कर उसे अभिलेख पर लाया जाता है, यह कहा जा सकता है कि मृतक की संपत्ति का विधिवत प्रतिनिधित्व हो रहा है।"

... ...

"आदेश 22 के नियम 4 एवं 5 के प्रावधान अनिवार्य प्रकृति के हैं। **जब किसी अपील में प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है, तो न्यायालय यह नहीं कह सकता कि वह मृत प्रतिवादी की संपत्ति के सभी प्रतिद्वंद्वी दावेदारों को सुनकर अपील का निस्तारण कर देगा। न ही वह यह कर सकता है कि सभी ऐसे व्यक्तियों को, जो स्वयं को विधिक प्रतिनिधि बताते हैं, बिना यह निर्धारित किए कि मृतक की संपत्ति का प्रतिनिधित्व कौन करेगा, अपील में पक्षकार बना ले और गुण-दोष के आधार पर अपील की सुनवाई आगे बढ़ाए। न्यायालय यह भी नहीं कर सकता कि मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि का निर्धारण करने के प्रश्न को अपील के गुण-दोष के साथ-साथ अंतिम निर्णय के लिए स्थगित कर दे।** संहिता स्पष्ट रूप से यह प्रावधान करती है कि जहाँ यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि कोई व्यक्ति मृत प्रतिवादी का विधिक प्रतिनिधि है या नहीं, उस प्रश्न का निर्धारण न्यायालय द्वारा किया जाएगा।

... ...

हालांकि नियम 5 में यह विशेष रूप से उपबंधित नहीं है कि विधिक प्रतिनिधि का निर्धारण अपील के गुण-दोष पर सुनवाई से पूर्व किया जाना चाहिए, **नियम 11 के साथ पढ़ा गया नियम 4 यह स्पष्ट करता है कि**

कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड में लाए जाने के बाद ही अपील की सुनवाई की जा सकती है।

(जोर दिया गया)

9. उपरोक्त विधिक परिप्रेक्ष्य में वर्तमान प्रकरण का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उच्च न्यायालय ने यह अभिलक्षित करने के पश्चात कि दो अलग-अलग आवेदकों ने स्वयं को मृत महंत के चेले बताते हुए उसके विधिक प्रतिनिधि होने का दावा किया है, दिनांक 02 जुलाई, 2008 के आदेश द्वारा मामले को दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 5 के अंतर्गत निर्धारण हेतु भभुआ के अधीनस्थ न्यायाधीश को संदर्भित किया, जो कि उचित था। तदनुसार, विचारण न्यायालय ने उक्त प्रश्न का निर्णय करते हुए दिनांक 04 दिसंबर, 2008 की अपनी प्रतिवेदन के साथ प्रकरण को पुनः उच्च न्यायालय को प्रेषित कर दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष, प्रतिद्वंद्वी दावेदार ने आपत्ति प्रस्तुत की और उसके प्रत्युत्तर में अन्य आवेदक ने प्रति-शपथपत्र दाखिल किया। इसके पश्चात, उच्च न्यायालय ने दोनों दावेदारों में से मृतक के विधिक प्रतिनिधि के प्रश्न का गुण-दोष के आधार पर निर्णय करने के स्थान पर, केवल दोनों दावेदारों को मृत अपीलकर्ता के स्थान पर प्रतिस्थापित कर दिया।

10. स्पष्टतः, लंबित अपील में विधिक प्रतिनिधि को अभिलेख पर लाने के प्रश्न का निस्तारण आदेश 22 नियम 5 के प्रावधानों के अनुसार निर्धारित तरीके से किया जाना चाहिए। स्थापित विधिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य से यह स्पष्ट है कि जब किसी लंबित वाद में न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि मृतक के विधिक उत्तराधिकारी के रूप में अभिलेख पर कौन आएगा, तो न्यायालय को वाद के गुण-दोष से संबंधित मूल मुद्दों पर विचार करने से पूर्व, सर्वप्रथम यह निर्धारित करना चाहिए कि मृतक का विधिक प्रतिनिधि कौन है। यह भी सुव्यवस्थित है कि जब द्वितीय अपील के चरण में किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाती है और मृतक के विधिक प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले प्रतिद्वंद्वी

दावेदार उपस्थित होते हैं, जैसा कि वर्तमान मामले में है, तब न्यायालय पर यह दायित्व होता है कि वह सर्वप्रथम यह निर्धारित करे कि मृतक का विधिक प्रतिनिधि कौन है। ऐसा किए बिना न्यायालय वाद के निस्तारण की कार्यवाही आगे नहीं बढ़ा सकता। साथ ही, न्यायालय सभी दावेदारों को पक्षकार नहीं बना सकता। विधिक प्रतिनिधि के निर्धारण के प्रश्न को इस दृष्टि से भी स्थगित नहीं किया जा सकता कि इसे अपील के अंतिम निस्तारण के समय गुण-दोष के आधार पर तय किया जाएगा। यह महत्वपूर्ण है कि विधि ने स्पष्ट रूप से यह निर्देश दिया है कि यदि अपीलीय न्यायालय के समक्ष किसी उत्तराधिकारी के विधिक प्रतिनिधि के निर्धारण का प्रश्न उत्पन्न होता है, तो वह अधीनस्थ न्यायालय को निर्देश दे सकता है कि वह परीक्षण की प्रक्रिया के माध्यम से, यदि कोई साक्ष्य हो, उसका संकलन कर आवश्यक जांच करे और यह निष्कर्ष अभिलिखित करे कि विधिक प्रतिनिधि कौन है। विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष पर विचार करने के पश्चात अपीलीय न्यायालय मृतक के विधिक प्रतिनिधि को अभिलेख पर लाने का निर्णय कर सकता है।

11. यह निर्विवाद है कि प्रक्रिया संबंधी विधियाँ न्याय को आगे बढ़ाने के लिए होती हैं। संहिता के अंतर्गत जो प्रक्रिया अनिवार्य प्रकृति की है, उसे न्यायालयों द्वारा न तो छोड़ा जा सकता है और न ही उपेक्षित किया जा सकता। जबकि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 5 के अभिप्राय को क्षीण करता है तथा ***जलादी सुगुना*** (उपरोक्त) में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के विपरीत है। उच्च न्यायालय का ऐसा दृष्टिकोण संधारणीय नहीं माना जा सकता।

12. यद्यपि हमें इस तथ्य की जानकारी दी गई है कि कथित विधिक प्रतिनिधि यह सिद्ध करने के लिए कुछ परंपराओं पर निर्भर कर रहे हैं कि संबंधित *संप्रदाय* के अंतर्गत क्या कोई *गृहस्थ गुरु* हो सकता है, तथापि इस चरण पर हम विचारण न्यायालय द्वारा गुण-दोष के आधार पर दिए गए उपर्युक्त निष्कर्षों से स्वयं को संबद्ध करने की आवश्यकता नहीं समझते। उक्त प्रतिवेदन पर विचार करना तथा विवादित तथ्यात्मक प्रश्न का निर्धारण

करना उच्च न्यायालय का दायित्व है। यह भी उल्लेखनीय है कि दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 5 के अंतर्गत किया गया निर्धारण संक्षिप्त प्रकृति का होता है और सीमित उद्देश्य के लिए किया जाता है। प्रत्यारोपण आवेदनों पर पारित आदेश, जिसमें किसी विशेष व्यक्ति को विधिक प्रतिनिधि के रूप में निर्धारित किया जाता है, अंतिम निर्णय का प्रभाव नहीं रखता और न ही यह इस प्रश्न पर कि *गुरु* के रूप में कौन अभिषिक्त होगा, विधिक प्रतिनिधियों के बीच *पूर्व न्याय* के रूप में कार्य करता है। पुनरुक्ति के जोखिम पर भी हम यह स्पष्ट करते हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा किया जाने वाला निर्धारण केवल इस प्रश्न तक सीमित होगा कि वाद की कार्यवाही को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से मृतक के स्थान पर अभिलेख पर किसे लाया जाना चाहिए, और इससे अधिक नहीं।

13. उपरोक्त कारणों के आलोक में, हम उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त करते हैं तथा प्रकरण को आदेश 22 नियम 5 के प्रावधानों के अनुसार प्रश्न का निर्धारण करने हेतु उच्च न्यायालय को पुनः प्रेषित करते हैं। उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदनों के आधार पर तथा पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत किसी भी आपत्ति या सामग्री को ध्यान में रखते हुए, मृतक स्वामी शिव धर्मानंद के विधिक प्रतिनिधि के संबंध में प्रश्न का गुण-दोष के आधार पर निर्णय करेगा। इसके पश्चात ही उच्च न्यायालय द्वितीय अपील की सुनवाई आगे बढ़ाएगा। हम उच्च न्यायालय से अनुरोध करते हैं कि वह इस प्रकरण को यथाशीघ्र ग्रहण कर विधि के अनुसार शीघ्रतापूर्वक इसका निस्तारण करे।

14. अपीलों से विराम लेने से पूर्व हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमने वाद के गुण-दोष पर कोई मत व्यक्त नहीं किया है। इस निर्णय में हमारे द्वारा की गई किसी भी टिप्पणी को इस न्यायालय की अंतिम अभिव्यक्ति के रूप में नहीं माना जाएगा और उच्च न्यायालय को इस प्रकरण का निस्तारण विधि के प्रावधानों के अनुसार करना होगा।

15. अपीलें उपर्युक्त शर्तों के अनुसार स्वीकार की जाती हैं। परिणामस्वरूप, यदि कोई लंबित आवेदन हों, तो वे भी निस्तारित माने जाएंगे। कोई व्ययादेश नहीं।

देविका गुजराल अपीलों को अनुमति दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।